इकाई 6 प्रमुख अभिलक्षण

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य
6.1 प्रस्तावना
6.2 भारत सरकार अधिनियम, 1935
6.3 संविधान सभा
6.4 प्रमुख अभिलक्षण
  6.4.1 संप्रभु, लोकतांत्रिक, गणतन्त्र
  6.4.2 राज्यों का संघ
  6.4.3 मौलिक अधिकार
  6.4.4 राज्य-नीति के निदेशक सिद्धान्त
  6.4.5 मौलिक कर्तव्य
  6.4.6 संघ : कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका
6.5 आपात्काल प्रावधान
  6.5.1 सामान्य आपात्स्थिति
  6.5.2 संवैधानिक आपात्स्थिति की घोषणा
  6.5.3 वित्तीय आपात्काल
6.6 संघवाद
  6.6.1 केन्द्र-राज्य सम्बन्ध
6.7 आपेक्षिक सुनम्यता
6.8 सारांश
6.9 शब्दावली
6.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें
6.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम भारतीय संविधान के विशिष्ट लक्षणों की चर्चा उन सम्बद्ध घटनाओं के परिप्रेक्ष्य में करेंगे जोकि संविधान के लागू होने से पूर्व घटित हुईं। इस यूनिट के अध्ययन के बाद आप इस योग्य होंगे कि:

- भारतीय संविधान के अनिवार्य लक्षणों को सूचीबद्ध कर सकें; और
- प्रमुख अभिलक्षणों की महत्ता को बता सकें।

6.1 प्रस्तावना

भारतीय संविधान देश की जनता की आकांक्षा है। यह प्रशासन के विस्तृत सक्रियात्मक मापदण्ड तय करता है। यह संविधान संविधान-सभा में उन दीर्घ मन्त्रणाओं के बाद तैयार किया गया जो 6 दिसम्बर 1946 को आरम्भ हुईं और यह 26 जनवरी 1950 को लागू हो गया।

6.2 भारत सरकार अधिनियम, 1935

भारतीय संविधान का अग्रदूत था – 1935 का भारत सरकार अधिनियम, जिसे प्राय: अधिनियम 1935 से जाना जाता है। भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम, 1947 ने माना कि जब तक कोई नया संविधान लागू न हो, अधिनियम 1935 ही भारत की संवैधानिक विधि-संहिता रहे।

अधिनियम 1935 एक संयुक्त निर्वाचित समिति (Joint Select Committee) की उस रिपोर्ट का परिणाम था जिस पर, 2 अगस्त 1935 को इसे अन्तत: महारानी की सम्मति मिलने से पूर्व, ब्रिटिश पार्लियामेण्ट में विचार-विमर्श हुआ था। अधिनियम 1935 की कुछ विशिष्टताएँ, परिवर्तनों के साथ, यद्यपि, भारतीय संविधान में बाद में समाहित की गईं। इनमें शामिल हैं – एक संघ सरकार और राज्य सरकार(रों) के रूप में एक [संघीय संरचना केन्द्र और राज्य (एक/अनेक)] और उनके बीच सत्ता-शक्तियों का विभाजन (संघ सूची, राज्य सूची एवं समवर्ती सूची); द्विसदनी विधायिका – निम्न सदन और उच्च सदन (संघ स्तर पर लोकसभा एवं राज्य सभा, तथा राज्य स्तर पर राज्य विधान-सभा एवं विधान-परिषद्); संघीय न्यायालय (सर्वोच्च न्यायालय)।

6.3 संविधान सभा

एक संविधान लिखे जाने के उद्देश्य से एक संविधान सभा संयोजित की गई। संविधान बनाना कोई आसान काम नहीं था। इस संविधान को उन लोगों की आकांक्षाओं को पूरा करना था जो कई शताब्दियों से अन्याय, सामाजिक शोषण और भेदभाव, साथ ही दो शताब्दियों से औपनिवेशिक शासन को झेलते आ रहे थे। इसके अतिरिक्त, यदि यह विविध धार्मिक, राजनीतिक एवं क्षेत्रीय वर्गों के लिए अनुप्रयोज्य और स्वीकार्य होता, यह उनके हितों को मूर्तरूप देता। वह आदर्श-वाक्य जिसको लेकर इस संविधान-निर्माण की कवायद का उपक्रम किया जा रहा था, वह था 'सर्वसम्मति', बजाय 'बहुमत सिद्धान्त' के। इसमें भिन्न-भिन्न विचारधाराओं की पृष्ठभूमि वाले, और उनमें भी अनेक कानून-संबंधी पृष्ठभूमि वाले प्रतिनिधियों ने मिलकर काम किया। इस कवायद के शीर्ष पर थे डॉ० राजेन्द्र प्रसाद, एक वयोवृद्ध स्वतन्त्रता आन्दोलनकारी जिन्होंने बाद में लगातार दो कार्यकाल तक भारत के राष्ट्रपति का कार्यभार संभाला, और पथ-प्रदर्शक ज्योति थे स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री, जवाहरलाल नेहरू। इस सभा के सुपरिचित सदस्यों में शामिल थे – टी.टी. कृष्णमाचारी, डॉ० भीमराव अम्बेडकर, अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर और गोपालस्वामी अयंगर, यामा प्रसाद मुखर्जी, जे. बी. कृपलानी, वल्लभभाई पटेल तथा पट्टाभि सीतारमैया।

इस संविधान सभा में 381 सदस्य होने थे। ये विभिन्न राजनीतिक दलों का प्रतिनिधित्व करते थे और काँग्रेस पार्टी, भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी, प्रजा पार्टी, कृषक प्रजा पार्टी, अनुसूचित जाति संघ, नॉन-कांग्रेस सिख्स, यूनियनिस्ट मुस्लिम्स तथा मुस्लिम लीग के सदस्य थे। इसके अलावा, स्वतन्त्र सदस्य और गवर्नर के प्रान्तों और राजसी राज्यों के प्रतिनिधि भी इस सभा में प्रतिनिधित्व करते थे। सभासदों की यह पूरी संख्या कभी नहीं रही।

इस सभा में उसके विचारार्थ प्रस्तुत किए जाने से पूर्व संविधान के प्रावधानों पर उन अनेक समितियों में विस्तृत रूप से वाद-विवाद किया जाता था जो इसी उद्देश्य से गठित की गई थीं। सभा में हुए विचार-विमर्श के आधार पर, प्रारूपण समिति जो 29 अगस्त 1947 को गठित की गई, ने संविधान का प्रारूप मूल-पाठ तैयार किया। डॉ. भीमराव अम्बेडर इस प्रारूपण समिति के अध्यक्ष थे। अन्तिम दस्तावेज पर, प्रारूप संविधान में रद्दोबदल किए जाने के बाद, 26 नवम्बर 1949 को हस्ताक्षर किए

गए, और दो माह बाद यह लागू हो गया। हम संविधान-निर्णय की कवायद की जाँच अधिक विस्तार से खंड 2 की इकाई 5 में कर चुके हैं।

वास्तव में, यह प्रशंसायोग्य है कि संविधान तैयार करने की कवायद संविधान सभा के सदस्यों ने तीन वर्ष की अवधि के भीतर ही समाप्त कर ली और दस्तावेज पर अपने हस्ताक्षर भी कर दिए जबकि अन्य देशों को अपना प्रथम संविधान बनाने में कहीं अधिक वर्ष लगे थे। तथापि, इसका श्रेय देश को ही जाता है और यह संविधान-निर्माताओं की बृहद् दृष्टि का प्रमाण है कि भारतीय संविधान का कभी निराकरण नहीं हुआ, न ही कोई नया लाया गया। भारतीय संविधान जब से लागू लागू हुआ है इस पर कभी कोई गंभीर सवाल नहीं उठाया गया। संविधान में प्रभावी संशोधनों के माध्यम से परिवर्तनशीलता वांछनीयताओं पर बेशक ध्यान दिया गया है जबकि इसके अनिवार्य अभिलक्षण बरकरार रहे; यद्यपि उन पर अक्सर दवाब बना।

6.4 महत्त्वपूर्ण अभिलक्षण

भारतीय संविधान के अनिवार्य अभिलक्षण इस प्रकार हैं : यह संविधान सर्वोच्च है; भारत की संप्रभुता को अभिभूत अथवा प्रत्याभूत नहीं किया जा सकता है; भारत एक गणतन्त्र है और किसी राजतन्त्र में नहीं बदला जा सकता है; लोकतन्त्र जीवन की एक दिशा है न कि मात्र वयस्क मताधिकार की व्यवस्था; धर्मनिरपेक्षता और स्वतन्त्र न्यायपालिका इस लोकतन्त्र की दो पीठिकाएँ हैं। हम इनमें से कुछ अभिलक्षणों पर चर्चा करेंगे।

6.4.1 संप्रभु, लोकतांत्रिक, गणतन्त्र

संविधान की 'प्रस्तावना' यह घोषित करती है कि इस देश के वासी संप्रभु हैं। अन्य शब्दों में, 'संप्रभुता' लोगों में निहित है और उन संस्थाओं के माध्यम से व्यवहृत है जो इसी उद्देश्य से सृजित की गई हैं। देश की संप्रभुता प्रतिभूत नहीं की जा सकती, यानी, भारत को किसी अन्य देश के उपनिवेश अथवा पराश्रितता में नहीं बदला जा सकता है। स्वतन्त्रता आन्दोलन की संपूर्ण प्रक्रिया संप्रभुता के इसी सर्वोत्कृष्ट सिद्धान्त पर थी।

'प्रस्तावना' में यह भी कहा गया है कि देश एक गणराज्य होगा और सरकार के लोकतान्त्रिक स्वरूप का पालन करेगा। एक गणराज्य में किसी राजतन्त्र के लोगों पर शासन करने की कोई सम्भावना नहीं होती, वरन् लोग स्वयं देश पर अपने चुने हुए प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन करते हैं।

6.4.2 राज्यों का संघ

हमारे संविधान का एक महत्त्वपूर्ण अभिलक्षण यह है कि इसने भारत को राज्यों के एक संघ के रूप में गठित किया है (अनु. 1)। संविधान में नए राज्यों के सृजन के साथ-साथ नए राज्यों को शामिल करने का भी प्रावधान है। इनके उल्लेखनीय उदाहरण हैं – 1956 में पहली बार एक भाषायी आधार पर तत्कालीन राज्यों में से कुछ का द्विभाजन करके बनाये गए राज्य – आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक और केरल। अभी हाल ही में, वर्ष 2000 में, तीन नए राज्य – उत्तरांचल, छत्तीसगढ़ और झारखण्ड – बनाए गए। भारतीय संघ में नए राज्यों के प्रवेश का एक उदाहरण है– 1975 में सिक्किम का संघ में शामिल होना, जो कि अब तक भारत का एक संरक्षित राज्य था। नए राज्यों को शामिल करने का प्रावधान इस सन्दर्भ में भी समझा जाना चाहिए कि राजसी राज्यों में से कुछ इसके बावजूद भी भारत का अंग बनने को राजी नहीं थे कि यह संविधान लागू होने ही

वाला था। हैदराबाद के निजाम का राज्य एक ऐसा ही उदाहरण है। और इसके अलावा, फ्रांसीसी और पुर्तगाली उपनिवेश थे – पांडिचेरी और गोवा जो भारत के साथ एकीकृत बने रहे। यह संविधान, इस प्रकार नए राज्यों के सृजन और नए राज्य-क्षेत्रों के लिए स्थान रखने की व्यवस्था देता है। एक बार भारत का अंग बन जाने के बाद उन्हें फिर पृथक् होने का अधिकार नहीं है।

बोध प्रश्न 1

नोट : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) उत्तर अपने शब्दों में देने का प्रयास करें।

1) वह कौन-सा सिद्धान्त था जिसने भारत में संविधान निर्माण की कवायद को सूचित किया?

.....

.....

.....

.....

.....

2) वह कौन-सा राज्य था जो भारतीय संघ में 1975 में शामिल किया गया?

.....

.....

.....

.....

.....

3) गणतन्त्र सरकार का वह स्वरूप है जिसमें –

.....

.....

.....

.....

.....

6.4.3 मौलिक अधिकार

मौलिक अधिकार, जिनकी व्यवस्था इस संविधान में दी गई, को इस रूप में संक्षेपित किया जा सकता है : समानता का अधिकार, स्वतन्त्रता का अधिकार, शोषण के विरुद्ध अधिकार, धर्म का अधिकार, सांस्कृतिक एवं शैक्षिक अधिकार और संवैधानिक प्रतिविधानों का अधिकार। संपत्ति का अधिकार चवालीसवें संविधान संशोधन अधिनियम के माध्यम एक विधिसम्मत अधिकार बना दिया गया था,

और तब से, यह एक मौलिक अधिकार नहीं है। देश के बृहद्तर हितों को देखते हुए, किसी भी व्यक्ति से सम्बन्धित सम्पत्ति को उसका 'मुआवजा' अदा करके अधिगृहीत किया जा सकता है।

मौलिक अधिकारों को संविधान के भाग-3 में स्थान दिया गया है और उनके परिपालन की सर्वोच्च न्यायालय द्वारा गारण्टी दी गई है। अन्य शब्दों में, मौलिक अधिकार वाद योग्य हैं। वास्तव में, मौलिक अधिकारों में से कुछ, यह गौरतलब है, केवल देश के नागरिकों के लिए प्रयोज्य हैं और विदेशियों के लिए नहीं। अनुच्छेद 20, अनुच्छेद 21 और अनुच्छेद 22, बहरहाल, सभी के लिए प्रयोज्य हैं। यहाँ यह भी अच्छी तरह समझ लिया जाना चाहिए कि जो प्रयोज्य है वह अधिकार की 'सीमा' में है।

एक 'आपात् स्थिति' को छोड़कर, मौलिक अधिकार कभी भी निलम्बित नहीं किए जा सकते हैं। हालाँकि, आपात्स्थिति के दौरान भी अनुच्छेद 20 एवं अनुच्छेद 21 की बहाली नहीं रोकी जा सकती। संविधान में चवालीसवें संशोधन अधिनियम के द्वारा संशोधन किया गया और अनुच्छेद 359-1A के माध्यम से यह बताया गया कि अनुच्छेद 20 और अनुच्छेद 21 निलम्बित नहीं किए जा सकते बेशक उस समय आपात्स्थिति की घोषणा लागू हो।

स्वतन्त्रता का अधिकार

संविधान अनुच्छेद 19 से 22 के तहत स्वतन्त्रता का अधिकार भी सुनिश्चित करता है। अनुच्छेद 19 इनका वचन देता है – भारत और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, शान्तिपूर्ण सभा करने का अधिकार, परिषदें बनाने का अधिकार, देश के किसी भी भाग में जाने और बसने का अधिकार और अपने धर्म के प्रकटन और आचरण का अधिकार। ये अधिकार भी, उन सभी तर्काधारित प्रतिबंधों के अधीन हैं जो राज्य द्वारा अनुच्छेद 19 के उपवाक्य 2 से 6 के तहत लगाए जा सकते हैं।

अनुच्छेद 20 इनका वचन देता है – किसी भी व्यक्ति को उन कानूनों के आधार पर दण्डित नहीं किया जाएगा जो कि अपराध किए जाने के बाद अधिनियमित किए गए हों (*एक्स पोस्ट फैक्टो* कानूनों से संरक्षण), एक ही अपराध के लिए एक से अधिक बार दण्डित किए जाने से संरक्षण (दोहरे संकट से संरक्षण) और व्यक्ति को स्वयं के विरुद्ध मुकदमा चलाये जाने से संरक्षण (आत्म-दोषारोपण से संरक्षण)। अनुच्छेद 21 'व्यक्तिगत जीवन और स्वतंत्रता' के संरक्षण को सुनिश्चित करता है। अन्य शब्दों में, राज्य को कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के माध्यम को छोड़कर, अन्यथा किसी व्यक्ति के जीवन को छीनने का अधिकार नहीं है, अनुच्छेद 22 बिना मुकदमा चलाये किसी व्यक्ति को नज़रबंद किए जाने को निषिद्ध करता है। हालाँकि, किसी व्यक्ति की तीन माह तक, कुछ मामलों में इससे भी अधिक, संरक्षात्मक हिरासत की अनुमति है।

समानता का अधिकार

अनुच्छेद 14, कानून के समक्ष 'समानता के अधिकार' और 'कानूनों के समान संरक्षण के अधिकार' का वचन देता है। दूसरे शब्दों में, यह अनुच्छेद सुनिश्चित करता है कि किसी व्यक्ति पर मुकदमा केवल न्यायिक अदालत में ही चलाया जाएगा और हर व्यक्ति न्याय के लिए न्यायालय जा सकता है और यह कि, कानूनों के अनुप्रयोजन में किसी व्यक्ति से दूसरों की अपेक्षा बुरा व्यवहार नहीं किया जाएगा, न ही कोई व्यक्ति विशेष प्राधिकारों और अनुग्रह-प्रदर्शन के लिए दावा करेगा। अनुच्छेद 15 'धर्म, प्रजाति, जाति, लिंग अथवा जन्म-स्थान' के आधार पर भेदभाव से रक्षा का वचन देता है, और इस प्रकार समान प्रवेश और फिर इस प्रकार भेदभाव के विरुद्ध अधिकार की व्यवस्था देता है। यह, यद्यपि, स्पष्टत: यह भी बताता है कि राज्य (लोगों की कुछ श्रेणियों, जैसे सामाजिक एवं सांस्कृतिक रूप से पिछड़े वर्गों और अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों, के

उत्थान के लिए विशेष उपबंध बना सकता है। इस संदर्भ में एक उदाहरण है – समाज के अलाभान्वित वर्गों के लिए शैक्षिक संस्थाओं में और सार्वजनिक सेवाओं में की गई आरक्षण व्यवस्था। एक टीकाकार की टिप्पणी है – "अल्पसंख्यकों के संरक्षण हेतु विशेष प्रावधानों के माध्यम से कुछ मामलों में, मौलिक अधिकारों का वचन देकर अनेकत्व की वास्तविकता को स्वीकारते हुए भी भारतीय संविधान के रचयिताओं ने भारतीय पहचान के ऊपर मेहराब बनाने की कोशिश की है।'' अनुच्छेद 16 रोजगार में अवसर की समानता के अधिकार की व्यवस्था देता है। सभी नागरिकों के लिए समानता सुनिश्चित करने की अभिलाषा के साथ कायम संविधान ने 'अस्पृश्यता', जिसका व्यवहार अनुच्छेद 17 के तहत अपराध है, का भी उन्मूलन किया जबकि अनुच्छेद 18 ने 'उपाधियों' का उन्मूलन किया।

6.4.4 राज्य-नीति के निदेशक सिद्धान्त

राज्य-नीति के निदेशक सिद्धान्त (नीति-निदेशक सिद्धान्त) आयरलैण्ड के संविधान का रूपांतरण है। ये वो दिशा-निर्देश हैं जो कानूनों का अधिनियमन करते समय और उनके परिपालन में ध्यान में रखने होते हैं। मौलिक अधिकारों से भिन्न, नीति-निदेशक सिद्धान्त वाद योग्य नहीं है। सरल रूप में समझने के लिए, नीति-निदेशक सिद्धान्त 'कल्याण' अर्थबोधक हैं। संविधान उनका वचन दिए जाने की व्यवस्था नहीं देता है और, इसीलिए, उनको लागू किए जाने हेतु किसी न्यायालय में सवाल नहीं उठाया जा सकता है।

मौलिक अधिकार और नीति-निदेशक सिद्धान्त "एक साथ, न कि पृथक् रूप से'' संविधान के मर्म– "अकूट अन्त:करण'' का निर्माण करते हैं। नीति-निदेशक सिद्धान्त निर्धारित करते हैं कि राज्य सुनिश्चित करेगा – (क) सभी के लिए जीवन-यापन के पर्याप्त साधन, (ख) समृद्धि के संकेन्द्रण की बजाय उसका सार्वजनिक हित में वितरण और उस पर नियन्त्रण, (ग) स्त्री और पुरुष दोनों को समान कार्य के लिए समान वेतन, (घ) सभी तरह के कर्मचारियों के स्वास्थ्य का दुरुपयोग रोकना और (ङ) देश के बच्चों का शोषण से प्रतिरक्षण और एक स्वतन्त्र और गौरवमय वातावरण में उनका विकास।

6.4.5 मौलिक कर्तव्य

संविधान में दिए गए मौलिक कर्तव्यों का अभिप्राय है कि सब नागरिक सभी के सर्वमान्य हित के लिए अथक प्रयास करने को वचनबद्ध हैं। उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे संविधान, राष्ट्रीय तिरंगा और राष्ट्रीय-गान को सम्मान दें। उनका आह्वान किया जाता है कि वे देश की एकता और अखण्डता को कायम रखें और सभी अलगाववादी प्रवृत्तियों को त्यागकर एक सद्भावपूर्ण समाज के लिए काम करें। भारत के नागरिकों का कर्तव्य है कि वे देश के प्राकृतिक एवं भौतिक, दोनों ही संसाधनों की रक्षा करें और उपलब्धि के ऊँचे-से-ऊँचे क्षितिजों की दिशा में काम करें।

6.4.6 संघ : कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका

जैसा कि राजनीति शास्त्र के सभी विद्यार्थी जानते हैं, सरकार के तीन अंग अथवा शाखाएँ हैं, यानी, कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका। इन तीनों के बीच सामञ्जस्यपूर्ण रूप से कार्य-सम्पादन करना देश के विकास हेतु अत्यावश्यक है।

अपनी स्वतन्त्रता के समय भारत ने सरकार के एक संसदीय रूप को अपनाया जाना चुना। इस प्रकार की सरकार में, राष्ट्रपति राज्य का मुखिया होता है जबकि वास्तविक कार्यकारी शक्ति का

प्रयोग सरकार के मुखिया, प्रधानमंत्री, द्वारा उसकी मन्त्रिपरिषद् के सहयोग से किया जाता है। ये मन्त्री संसद के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होते हैं।

कार्यपालिका

भारत में, विधायिका और कार्यपालिका एक-दूसरे से ही निष्कर्षित हैं जबकि न्यायपालिका एक स्वतन्त्र निकाय है। विधायिका में होते हैं – लोक सदन (लोक सभा), राज्य परिषद् और भारत का राष्ट्रपति। संघीय मन्त्रिपरिषद् का सदस्य आवश्यक रूप से किसी भी सदन – लोक सभा अथवा उच्च सदन, राज्य सभा – का सदस्य होता है।

राष्ट्रपति

संसद के दोनों सदन और राज्यों के विधान-मंडल राष्ट्रपति को एक 'एकल हस्तांतरणीय मत' के द्वारा चुनते हैं। राष्ट्रपति कार्यालय, उसके प्रकार्य, शक्तियाँ, कार्यकाल, चुनाव-विधि और पुनर्निर्वाचन, महाभियोग, और पदभार सम्भालने हेतु वांछित योग्यताएँ अनुच्छेद 52 से 62 में व्यक्त हैं। राज्य की सभी गतिविधियाँ राष्ट्रपति के नाम की जाती हैं क्योंकि कार्यकारी अधिकार राष्ट्रपति में ही निहित हैं (अनुच्छेद 52)। संयुक्त राज्य अमेरिका की भाँति, भारत में भी, राष्ट्रपति सशस्त्र सेनाओं का सर्वोच्च कमाण्डर होता है। राष्ट्रपति संसद के दोनों सदनों की बैठक बुलाता है और उसके संयुक्त सत्र को सम्बोधित करता है। उसे दण्डादेश में छूट देने और मृत्युदण्ड-स्थगन प्रदान करने का अधिकार है। वह राज्य के सभी महत्त्वपूर्ण कार्यकर्ताओं की नियुक्ति करता है; जैसे प्रधानमंत्री और मन्त्रिपरिषद्, सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश, महान्यायवादी, राज्यों के राज्यपाल, भारतीय चुनाव आयोग जैसे आयोगों के अध्यक्ष और भारत के मुख्य लेखा-नियन्ता एवं लेखा-परीक्षक (सी. एण्ड ए. जी.) जैसे संस्थानों के प्रमुख।

प्रधानमंत्री और मंत्रिपरिषद्

प्रधानमंत्री सरकार का मुखिया होता है और संघीय मन्त्रिपरिषद् की बैठक की अध्यक्षता करता है। यह ध्यान में रखने की आवश्यकता है कि मन्त्रिमण्डल और मन्त्रिपरिषद् में अन्तर है; मन्त्रिमण्डल में कैबिनेट स्तर के मंत्री और राज्य-मंत्रीगण होते हैं, जबकि परिषद् में उप-मन्त्री भी शामिल होते हैं। मन्त्रि-परिषद् सामूहिक रूप से संसद के प्रति उत्तरदायी होती है। मन्त्रियों की गतिविधियाँ संसदीय सत्र के प्रत्येक दिवस के आरम्भ में दो घण्टे तक चलने वाले 'प्रश्न काल' के दौरान प्रतिपक्ष द्वारा की जाने वाली संवीक्षा के अन्तर्गत आती हैं। मन्त्रिपरिषद् राष्ट्रपति को अपनी सिफारिशें प्रस्तुत करती है, जो देश के मामलों में राष्ट्रपति को 'मदद और सुझाव' देने के रूप में जानी जाती हैं। सिफारिशों में महत्त्वपूर्ण, जो हमें पता रखनी चाहिए, हैं – लोकसभा के भंग किए जाने, युद्ध की घोषणा किए जाने अथवा 'आपात् स्थिति' की घोषणा किए जाने से संबंधित सिफारिशें।

विधायिका/संसद

भारतीय संसद देश का सर्वोच्च विधि-निर्माण निकाय है। यह एक द्वि-सदनी विधायिका है जैसा कि ब्रिटिश साम्राज्य, संयुक्त राज्य अमेरिका एवं अन्य कई देशों में है।

उच्च सदन को हिन्दी में 'राज्य सभा' और अँग्रेजी में 'कौन्सिल ऑव स्टेट्स' के नाम से जाना जाता है। इसमें होते हैं – अध्यक्ष, जो भारत का राष्ट्रपति भी होता है; निर्वाचित सदस्य और 12 नामांकित सदस्य, जिनमें प्रत्येक का कार्यकाल छह वर्ष का होता है, साथ ही सदन के एक-तिहाई सदस्य प्रत्येक दो वर्ष बाद कार्यमुक्त हो जाते हैं।

राज्य सभा और इसके समकक्ष, अमेरिकन सीनेट का एक महत्त्वपूर्ण पहलू और उनके बीच अन्तर-बिन्दु है प्रत्येक की सदस्यता। यहाँ सीनेट अपनी जनसंख्या के अनुपात में होती है, जबकि राज्य सभा के सदस्यों को विधान सभा चुनती है। इस प्रकार, भारतीय संघ के सभी राज्य प्रतिनिधियों को एक समान संख्या में नहीं भेजते।

संसद में निचला सदन लोक सदन होता है, और सटीक शब्दों में– लोक सभा। इसके सदस्य क्षेत्रीय रूप से सीमांकित चुनाव-क्षेत्रों से 'सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार' के माध्यम से सभी योग्य मतदाताओं द्वारा सीधे-सीधे पाँच वर्ष अथवा कम की एकल अवधि के लिए चुने जाते हैं।

धन विधेयकों पर राज्य सभा का अधिकार कम ही है। ये राज्य सभा में पेश नहीं किए जा सकते। यह ऐसे विधेयकों को अपनी सिफारिशों के साथ 14 दिनों के भीतर लोक सभा को लौटा देता है, और उसकी सिफारिशों को स्वीकार करना अथवा उनमें से किसी को अस्वीकार करना लोकसभा पर है। लोक सभा और राज्य सभा के बीच किसी गैर-धन विधेयक पर गतिरोध की स्थिति में, राष्ट्रपति विधेयक पर बहस और मत व्यक्त किए जाने के लिए दोनों सदनों की एक संयुक्त बैठक बुलाता है।

कोई विधेयक राष्ट्रपति की सहमति मिलने के बाद ही एक अनुच्छेद का रूप लेता है। राष्ट्रपति को यह अधिकार है कि संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित किए गए किसी विधेयक पर सहमति देने से रोक ले अथवा उसे अपने सुझावों के साथ संसद को भेज दे। ऐसे अवसर कम ही आए हैं जब राष्ट्रपति ने अपनी सहमति को रोका हो, वो भी वस्तुतः, इस आधार-वाक्य के रूप में कि वह विधेयक 'आम राय' के साथ असंगत रूप में था। ऐसा ही एक उदाहरण था – 'डाक विधेयक' जो कि लोगों के निजी जीवन में अतिक्रमण के रूप में लिया गया।

बोध प्रश्न 2

नोट : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) उत्तर अपने शब्दों में देने का प्रयास करें।

1) अनुच्छेद 20 और 21 में कौन-से अधिकार दिए गए हैं? क्या ये अधिकार प्रतिबंधित अथवा अस्थायी रूप से निलम्बित किए जा सकते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) भारतीय संविधान में दिए गए मौलिक कर्त्तव्य कौन-कौन से हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

3) संघीय मन्त्रिमण्डल में होते हैं–

अ) प्रधानमंत्री, कैबिनेट स्तर के मंत्री और राज्य मंत्री।

ब) कैबिनेट स्तर के मन्त्री और राज्य मंत्री।

स) प्रधानमंत्री और कैबिनेट स्तर के मंत्री।

न्यायपालिका

सरकार का तीसरा और सबसे महत्त्वपूर्ण अंग है– न्यायपालिका। पुनर्विचार के लिए प्रार्थना करने की उच्चतम अदालत है – सर्वोच्च न्यायालय। सर्वोच्च न्यायालय के पास अपील संबंधी और मौलिक, दोनों अधिकार क्षेत्र हैं, जैसा कि उच्च न्यायालयों के पास अपने-अपने राज्यों में होता है।

सर्वोच्च न्यायालय संविधान का अभिरक्षक है। विधायिका द्वारा अधिनियमित कानून सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अवैध घोषित किए जा सकते हैं, यदि उसका मत है कि वे संविधान के प्रावधानों से मेल नहीं खाते। इस शक्ति को 'न्यायिक पुनरावलोकन' अधिकार के रूप में जाना जाता है। इसके अलावा, सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय सरकार और उसके अभिकर्त्ताओं को परमादेश जारी कर सकते हैं। एक सुपरिचित उदाहरण हैं – *बंदी प्रत्यक्षीकरण* का परमादेश। ऐसे परमादेश को जारी किए जाने के लिए दलील देकर एक आवेदक सर्वोच्च न्यायालय से निवेदन किए जाने के लिए दलील देकर एक आवेदक सर्वोच्च न्यायालय से निवेदन करता है कि संबंधित पुलिस प्राधिकारियों को निर्देश दिया जाए कि वे अदालत के सामने उस व्यक्ति को पेश करें जो गुम है और माना जाता है कि उनके अभिरक्षण में है।

भारत का राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों के सभी न्यायाधीशों और मुख्य न्यायाधीशों को नियुक्त करता है। संविधान यह भी स्पष्टत: बताता है कि न्यायाधीशों पर महाभियोग के लिए क्या प्रक्रिया है और सर्वोच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश पर केवल संसद ही महाभियोग लगा सकती है। किसी सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश पर महाभियोग प्रारंभ करने की घटना सिर्फ एक बार हुई, जब न्यायविद् के. रामास्वामी पर महाभियोग लगाये जाने के लिए पूछताछ हुई, लेकिन इस प्रस्ताव को सफलता नहीं मिली।

सर्वोच्च न्यायालय और संसद के बीच रस्साकशी का अवसर भी आया है। अंतत: इसका हल संविधान संशोधन अधिनियम की मदद से निकाला गया जिसमें कहा गया है कि कोई अधिनियम संविधान के प्रावधानों से मेल खाता है अथवा नहीं, सर्वोच्च न्यायालय का अधिकार सिर्फ बताने भर का है।

6.5 आपात्काल प्रावधान

आपात्काल प्रावधान अनुच्छेद 352 से 360 के तहत संविधान के भाग-XVIII में दिए गए हैं। तीन प्रकार की आपात्स्थितियाँ हैं जो घोषित की जा सकती हैं:

6.5.1 सामान्य आपात्स्थिति

आपात्स्थिति की उद्घोषणा तब की जा सकती है जब देश की सुरक्षा को खतरा हो अथवा वह युद्ध-काल अथवा बाह्य आक्रमण अथवा सशस्त्र विद्रोह के दौरान शत्रु देशों की किसी धमकी से

संकटग्रस्त हो। (अनुच्छेद 352)। इस प्रावधान के तहत आपात्काल की घोषणा पहली बार 26 अक्तूबर, 1962 को चीन से साथ युद्ध के चलते की गई थी। यह 10 जनवरी, 1968 तक जारी रही। आपात्स्थिति की एक अन्य उद्घोषणा, भारत-पाकिस्तान युद्ध के चलते, 2 दिसम्बर, 1971 को हई। इसके जारी रहते, एक तीसरी आपात्स्थिति की घोषणा 25 जून, 1975 को की गई। यह 1977 में निरस्त हुई। आलोचकों का तर्क है कि तीसरी आपात्स्थिति की घोषणा का उद्देश्य श्रीमती इंदिरा गाँधी को कुछ और समय सत्ता में बनाए रखना था, न कि कोई वास्तविक खतरा। भारतीय लोकतन्त्र का यह सर्वाधिक अन्धा युग था जबकि दीर्घीकृत समयावधि के लिए मनमानी नज़रबंदी हुईं और मौलिक अधिकारों के व्यापक उल्लंघन के इल्ज़ाम लगाए गए।

6.5.2 संवैधानिक आपात्स्थिति की घोषणा

सर्वाधिक विवादास्पद और दुष्प्रयुक्त आपात्काल प्रावधान है – अनुच्छेद 356। यदि राष्ट्रपति को किसी राज्य के राज्यपाल से इस आशय की कोई रिपोर्ट मिलती है कि संवैधानिक व्यवस्था-तन्त्र भंग हो चुका है अथवा राज्य का प्रशासन भारतीय संविधान में दिए गए प्रावधानों के अनुसार अब नहीं चलाया जा सकता है, उस राज्य में आपात्स्थिति घोषित की जा सकती है। राष्ट्रपति ऐसा तब भी कर सकता है यदि उसे किसी राज्य में संवैधानिक गड़बड़ी का अन्यथा निश्चय हो। यह प्रावधान राज्य-सरकार को भंग किए जाने और इसे राष्ट्रपति-शासन अथवा केन्द्रीय-शासन के तहत लाने की अनुमति देता है। ऐसी स्थिति में राज्य का राज्यपाल सभी प्रकार्यों का उत्तरदायित्व लेता है और राज्य में प्रशासन राष्ट्रपति की ओर से चलाता है, यानी संघीय मन्त्रिपरिषद् की सिफारिश पर राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त अपने सलाहकारों की मदद से केन्द्र की ओर से।

ऐसे अनेक अवसर आये हैं जब अनुच्छेद 356 को विभिन्न राज्यों में लागू किया गया। अनुच्छेद 356 का वास्ता देकर किसी राज्य सरकार को भंग करने की पहली घटना 1959 में हुई जबकि उस सरकार को राज्य विधान-मंडल का विश्वासमत हासिल था; केरल में, तत्कालीन कम्यूनिस्ट सरकार बर्खास्त कर दी गई। इसने एक बड़े विवाद को जन्म दिया और यह तर्क दिया गया कि यह एक गलत निर्णय था क्योंकि राज्य विधान सभा में सरकार के पास बहुमत था। दूसरी ओर, इस निर्णय के समर्थक यह मानते थे कि सरकार और उसकी नीतियों के विरुद्ध आन्दोलन के रूप में व्यक्त जन-असंतोष ही यह तय करने के लिए पर्याप्त कारण था कि वहाँ, वास्तव में, कानून-व्यवस्था भंग हो चुकी थी, और इसीलिए, राष्ट्रपति-शासन लागू करना उचित था।

अन्य उदाहरणों में शामिल है – दो बार राज्य सरकारों का सामूहिक रूप से निलम्बन, 1977 के आम चुनावों में जनता पार्टी की आसान जीत के बाद और उसके बाद 1979 में जब काँग्रेस पार्टी सत्ता में लौटी। अन्य विवादास्पद अवसर, जिन पर इस प्रावधान का वास्ता फिर दिया गया, हैं– 1984 में आन्ध्र प्रदेश और उसके बाद कर्नाटक में जब एस.आर. बोम्मई सरकार को बर्खास्त किया गया, और उसके बाद तुरन्त ही न्यायालय ने कहा कि यह निर्णय अनुचित था।

6.5.3 वित्तीय आपात्स्थिति

वित्तीय आपात्स्थिति की घोषणा अनुच्छेद 360 के तहत उन दशाओं में की जा सकती है जिनमें देश अथवा देश के किसी भाग की वित्तीय स्थिरता अथवा साख को खतरा हो। हालाँकि, जैसी कि चवालीसवें संविधान संशोधन अधिनियम, 1979 में व्यवस्था दी गई है, इस प्रकार की उद्घोषणा के लिए आवश्यक है कि इस आशय की उद्घोषणा की तिथि से दो माह के भीतर इसे लोक सभा और राज्य सभा, दोनों की स्वीकृति मिलनी चाहिए, अथवा, यदि उस समय लोकसभा भंग है, इसके (नए सदन) पुनर्गठन की तिथि से 30 दिनों के भीतर।

6.6 संघवाद

स्वतन्त्रताप्राप्ति के समय देश की विविधता इस प्रकार की थी कि संविधान-निर्माताओं ने सोचा कि इसे एक संघीय संरचना के भीतर एक सशक्त संघीय सरकार (केन्द्र) प्रदान करना उपयुक्त रहेगा। केन्द्र-राज्य संबंधों से संबंधित प्रावधान संविधान के भाग-XI में उल्लिखित हैं। भारतीय संविधान सरकार के लिए विभिन्न राज्यों में विशिष्ट अधिकारों को भी व्यवस्था देता है। भारत का संविधान इस प्रकार केन्द्रीकृत और विकेन्द्रीकृत, दोनों ही अभिलक्षणों वाला है।

स्वतन्त्रता के बाद डेढ़ दशक से भी अधिक तक, केन्द्र और राज्यों के बीच प्राय: कोई समस्या नहीं थी। विद्वजन इसका श्रेय इन बातों को देते हैं – केन्द्र के साथ-साथ देश में अधिकतर राज्यों में कांग्रेस सरकारों का अस्तित्व, तत्कालीन प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरू का कीर्तिमय व्यक्तित्व, और केन्द्र के साथ-साथ राज्यों में नेतृत्व भी, जो विच्छेदोन्मुखी कम, बल्कि आदर्शवाद-निर्देशित अधिक था।

उस समय संबंधों में संतुलन केन्द्र के पक्ष में अधिक अभिनत रहा जब इन्दिरा गाँधी देश की प्रधानमन्त्री थीं। ऐसा केवल आपात्स्थिति की वज़ह से नहीं था जो 1975 में लगाई गई थी, बल्कि राज्य-स्तर पर कमज़ोर नेताओं के कारण भी था जिनका राजनीतिक सत्ता में अस्तित्व इस आघात पर निर्भर था यदि वे केन्द्र-स्तर पर शक्ति-प्रयोग कर सकते थे।

नब्बे के दशक तक कम-से-कम कुछ राज्य तो केन्द्र के समकक्ष अधिक शक्ति-प्रयोग करने ही लगे। उस केन्द्रीय सरकार, जिसके पास संसद में पूर्ण बहुमत का अभाव था, को अपने संश्रितों के समर्थन पर निर्भर करना पड़ा – तमिलनाडु में द्रविड़ मुनेत्र कषगम और ऑल-इण्डिया अन्ना मुनेत्र कषगम, आन्ध्र प्रदेश में तेलुगुदेशम्, महाराष्ट्र में शिव सेना, जम्मू-कश्मीर में नैशनल कॉन्फ्रेंस, असम में असॅम गण परिषद् और पूर्व जनता पार्टी के अभी हाल ही के विछिन्न गुट जिन्होंने स्वयं को विभिन्न राज्यों में स्थापित कर लिया था।

6.6.1 केन्द्र-राज्य सम्बन्ध

साठ के दशकांत में, केन्द्र-राज्य संबंधों में समस्याएँ गैर-कांग्रेस सरकारों के इन अनेक राज्यों में सत्ता में आने के बाद सामने आयीं – उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, केरल, पंजाब, उत्तरप्रदेश और बिहार।

वित्तीय संबंध

एक अन्य विवादास्पद विषय है– केन्द्र और राज्यों के बीच वित्तीय संसाधनों का बँटवारा और विभिन्न राज्यों को केन्द्रीय अनुदानों का आबंटन। जबकि राज्य एक लम्बे समय से बृहद्तर भागों के आबंटन की माँग करते रहे हैं, एक नया सुझावित प्रस्ताव है – 'निष्पादन के आधार' पर आबंटन।

राज्यपाल का शासन

पुन: एक अन्य भेद-बिन्दु है – किसी राज्य पर 'राज्यपाल-शासन का लागू होना' और कार्यालय में रहते, उसकी अप्रत्याशित पदच्युति के अतिरिक्त भी उसकी भूमिका। राज्यपाल सामान्यत: संबंधित राज्य के मुख्यमंत्री के संगमन में ही नियुक्त किए जाते हैं, और 1988 में सरकारिया आयोग ने भी

इसी की सिफारिश की थी। इस सिफारिश का, यद्यपि इसी रूप में हमेशा पालन नहीं किया गया है। सरकारिया आयोग ने सहकारी संघवाद की घोषणा करने का प्रयास किया। बहरहाल, आयोग की अधिकतर सिफारिशों के अमल में आने की प्रतीक्षा है।

6.7 आपेक्षिक सुनम्यता

भारतीय संविधान संशोधनों को स्थान देता है। इस संदर्भ में, कुछ अन्य देशों से भिन्न, यह संविधान कठोर नहीं है । जैसा कि अनेक विद्वजनों ने गौर किया है, संविधान कोई जीवित दस्तावेज नहीं होता और, इसलिए, इससे परिवर्तनशील समय-काल प्रतिबिम्बित होना चाहिए। 'प्रस्तावना' में संशोधन ने धर्मनिरपेक्षता के सिद्धान्त को संविधान का एक अभिन्न अभिलक्षण बना दिया।

जब किसी संविधान को संशोधित किया जाता है तो यह आशा की जाती है कि यह बेहतरी के लिए कोई परिवर्तन लायेगा। अन्य शब्दों में, यह 'कुछ छीनने' की बजाय 'कुछ और देगा'। अनुच्छेद 368, अन्य अनुच्छेदों के साथ, संसद को संविधान में संशोधन करने की शक्ति प्रदान करता है। वास्तव में, संविधान के जो मौलिक अभिलक्षण हैं उन पर बहस का अवसर तभी पैदा हुआ जब संविधान में कुछ संशोधन किए गए। संविधान में दी गई संशोधन प्रक्रिया विभिन्न अनुच्छेदों के लिए कठोर और कोमल, दोनों है। जबकि कुछ को मात्र एक साधारण बहुमत की आवश्यकता होती है, अधिकतर को संसद के दोनों सदनों में उपस्थित और मतदान में भाग लेने वालों के दो-तिहाई बहुमत और राष्ट्रपति की स्वीकृति की आवश्यकता होती है। कठोरतम निर्धारित संशोधन प्रक्रिया में, उपस्थित और मतदान करने वालों के दो-तिहाई की वांछनीयता के अतिरिक्त, देश में राज्य विधान-मण्डलों की कुछ संख्या के कम-से-कम आधों की सहमति भी आवश्यक होती है। और इससे भी आगे, इसे राष्ट्रपति की स्वीकृति की आवश्यकता होती है।

सर्वाधिक प्रबल रूप से विवादित पहलुओं में से दो थे – एक, संसद के प्रभुत्व पर संविधान के किसी भी अनुच्छेद पर संशोधन स्वयं लागू करना और दो, किसी संशोधन पर निर्णय लेने की सर्वोच्चता किसके पास है?

जबकि भारतीय संसद इस बात पर कायम थी कि यह सर्वोच्च सत्ता उसी के पास है और, इसीलिए, संविधान में किसी भी अनुच्छेद में संशोधन का उसे अधिकार है, इसके आलोचकों ने कहा कि सर्वोच्च संसद नहीं बल्कि संविधान है, और संसद किसी अन्य संस्था की भाँति ही उसकी एक रचना मात्र है। अन्तिम विश्लेषण में, यह मान लिया गया कि संसद संविधान में संशोधन हेतु वैध रूप से प्राधिकृत है, लेकिन वहीं तक कि यह 'संविधान के आधारभूत अभिलक्षणों' को संशोधित न करे। इसके अतिरिक्त, सर्वोच्च न्यायालय को अधिकार है कि यह निर्णय करे कि संविधान में कोई संशोधन, वास्तव में, संविधान के आधारभूत अभिलक्षणों के विरुद्ध है अथवा नहीं।

बोध प्रश्न 3

नोट : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) उत्तर अपने शब्दों में देने का प्रयास करें।

1) बन्दी-प्रत्यक्षीकरण क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) भारतीय संविधान में संशोधन करने हेतु संसद की शक्ति की जाँच करें।

.....

.....

.....

.....

.....

3) क्या भारतीय संसद संविधान की आधारभूत संरचना को बदल सकती है?

.....

.....

.....

.....

.....

6.8 सारांश

भारतीय संविधान एक सफल दस्तावेज है और इसने सर्वोत्तम लोकतान्त्रिक परम्परा के पालन का प्रयास किया है। इसके द्वारा स्थापित परम्परा में आवसरिक अनियमितताओं को सुधारने का लचीलापन था, जो स्वयं ही इसकी सफलता का प्रमाण है। संविधान संघवाद को समाविष्ट करता है, देश के लोगों के मौलिक अधिकारों, एक जाँच-प्रक्रिया, का वचन देता है और राष्ट्रपति, मन्त्रिपरिषद्, संसद और सर्वोच्च न्यायालय के संस्थानों के माध्यम से संतुलन कायम रखता है।

6.9 शब्दावली

अधिकारों का संवैधानिक वचन : राज्य द्वारा उल्लंघन किए जाने से वह संरक्षण जो संविधान सुस्पष्ट रूप से प्रस्तुत करता है।

अधिनियमन बिन्दु जिस पर एक कानून, जैसा कि एक संसद-अधिनियम में व्यक्त है, प्रभाव में आ जाता है।

कार्यपालिका सरकार के भीतर से वे, जो नीति को परिभाषित और लागू करते हैं, और जो

		अपने प्रशासन के लिए संसद के प्रति उत्तरदायी होते हैं।
कार्योत्तर	:	पश्च क्रिया, अथवा बाद में किए गए कार्य से अथवा द्वारा; एक तुरन्त बाद किए गए कार्य के परिणामस्वरूप; पश्चोन्मुख।
द्विसदनी	:	संसद जिसमें दो सदन होते हैं (एक उच्च सदन और एक निम्न सदन)।
मन्त्रिपरिषद्	:	इसमें होते हैं – प्रधानमंत्री, कैबिनेट मन्त्री, राज्य मन्त्री और उप-मन्त्रीगण।
संशोधन	:	संविधान परिवर्तन की एक निर्णायक और औपचारिक प्रक्रिया।

6.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

ऑस्टीन, ग्रैनविल : *दि इण्डियन कॉन्सटीट्यूशन : कॉर्नरस्टोन ऑव ए नेशन,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, 1996.

बक्शी, पी.एम., *दि कॉन्सटीट्यूशन ऑव इण्डिया* (लेखक द्वारा विशेष टिप्पणियों के साथ), यूनिवर्सिटी लॉ पब्लिशिंग हाउस, 1999.

6.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) सर्वसम्मति पर आधारित निर्णय।

2) सिक्किम।

3) लोग स्वयं अपने चुने हुए प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन करते हैं।

बोध प्रश्न 2

1) अनुच्छेद 20 निष्पक्ष न्याय-विचार मुकदमे का वचन देता है और अनुच्छेद 21 सभी व्यक्तियों के जीवन और स्वतंत्रता की रक्षा करता है। जबकि कुछ परिस्थितियों के अन्तर्गत अधिकतर मौलिक अधिकारों पर प्रतिबन्ध लगाए जा सकते हैं, 44वाँ संशोधन बताता है कि अनुच्छेद 20 और अनुच्छेद 21 किसी आपात्स्थिति के दौरान भी प्रतिबन्धित नहीं किए जा सकते हैं।

2) नागरिक इन बातों के लिए बाध्य हैं – सभी के सर्वमान्य हित के लिए संघर्षरत रहना, देश की एकता और अखण्डता को बनाए रखना, एक सद्भावपूर्ण समाज के लिए काम करना और देश के संसाधनों की रक्षा करना।

3) अ।

बोध प्रश्न 3

1) यह अदालत द्वारा उसके सामने 'निकाय अथवा या व्यक्ति को प्रस्तुत' करने के लिए राज्य प्राधिकारियों द्वारा दिया गया परमादेश है।

2) संसद संविधान के कुछ अनुच्छेदों को एक साधारण बहुमत से संशोधित कर सकती है, लेकिन अधिकतर संशोधनों के लिए उपस्थित और वोट कर रहे सदस्यों के दो-तिहाई की सहमति और राष्ट्रपति की स्वीकृति की आवश्यकता होती है। कुछ को इसके अतिरिक्त राज्य-विधानमण्डलों के कम-से-कम आधों की सम्मति भी आवश्यक होती है।

3) चूँकि संविधान और न कि संसद सर्वोच्च है, संसद संविधान के आधारभूत अभिलक्षण को संशोधित अथवा परिवर्तित नहीं कर सकती है।